RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-03
Issue-01
January-2018

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

प्राचीन भारतीय इतिहास के साधन के रूप में महत्वपूर्ण मान्यतायें

Dr. Sanjay Kumar

Dept. of A.I.S.A.S History, Magadh University Bodh Gaya , Bihar

ARTICLE DETAILS

Article History

Published Online: 28 January 2018

Keywords
अवधानणाएँ, आधारस्तम्भ, अनुकरणीय।

ABSTRACT

भारत अति प्राचीन सभ्यता है। विगत 5000 वर्षों से इसका अस्तित्व है। अनेक महत्वपूर्ण प्राचीन सिद्धान्त, मान्यतायें और अवधारणाएँ इत्यादि आज भी इस राष्ट्र के आधारस्तम्भ हैं। भारत की अति प्राचीन सभ्यता, संस्कृति और मान्यतायें शाश्वत एवं आदर्श हैं इसलिए सम्पूर्ण विश्व के लिए अनुकरणीय हैं। प्राचीन भारतीय इतिहास के समग्र अध्ययन में ऐसी कतिपय मान्यतायें अध्ययन के प्रमुख साधन के रूप में भी समर्थ हैं। अतः प्रस्तुत शोध–आलेख प्राचीन इतिहास के कुछ ऐसे अति प्राचीन मान्यताओं को रेखांकित करता है जो प्राचीन इतिहास के अध्ययन के लिए प्रमुख साधन के रूप में सार्थक एवं उपयोगी हो सकता है।

अध्ययन–प्रविधि :

शोध–आलेख में ऐतिहासिक अनुसंधान विधि के द्वारा अतीत के आधारों का अध्ययन कर प्रस्तुत अध्ययन की सार्थकता को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है। प्रमुख एवं भारत की अति प्राचीन संस्थाओं से संबंधित मान्यताओं का विश्लेषण किया गया है। विश्लेषण के क्रम में महाभारतकालीन मान्यताओं का भी विवेचन किया गया है। अध्ययन से संबंधित अनेक महत्वपूर्ण शोध–ग्रंथ, पत्र–पत्रिकाओं से प्राप्त सामग्री द्वितीयक स्त्रोत के उदाहरण हैं। प्रस्तुत अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष नवीन ज्ञान में सहायता प्रदान करने में सक्षम है।

व्याख्याः

प्राचीन भारतीय इतिहास का विवेचन भारतीय समाज पर ही माना गया है। प्राचीन भारतीय इतिहास अर्थव्यस्था, राजनीतिक व्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था, विज्ञान सभी को संतुलन करती है, वर्णाश्रम व्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था का आधार भिति के रूप में स्थापित की गयी, साथ ही आश्रम, संस्कार, रीति रिवाजों पर ध्यानाकृष्ट किया जाए तो सामाजिकता, अर्थव्यवस्था की सभी बिन्दुओं पर सुदृढ़ स्थिति का परिचायक माना गया है।

प्राचीन नगर–राज्य एवं राज्य संबंधी संस्थायें :

वेदोत्तर युग में एक सम्राट के करद–सामन्त के रूप में छोटे–बड़े अनेक राजाओं का उल्लेख बराबर मिलता है। बहुत सम्भव है कि वैदिककाल में भी यही स्थिति रही हो। स्वराष्ट्र के मुकाबले में सम्राट की राज्य सीमा का क्या विस्तार था इसका ठीक–ठीक निश्चय नहीं हो सकता। वैदिक काल के अधिकांश राज्य छोटे ही होते थे चौथाई पंजाब के बराबर भी कोई राज्य उस समय रहा हो इसमें संदेह है। सम्भव है कि राज्य भी साधारण राज्य से विशेष बड़ा न रहा हो और उसका ऊँचा पद राज्य–विस्तार की अपेक्षा उसकी सामरिक कीर्ति और विजयों को ही अधिक सूचित करता होगा। राजा का राज्य सम्राट के सम्राज्य से प्रायः छोटा होता था। ऐतरेय ब्राह्मण में जो कहा गया है कि मध्यप्रदेश में राजा राज्य करते थे व पूर्ण हिन्दुस्तान में सम्राट इसमें उपरिनिर्दिष्ट विधान या पुष्टि मिलती है। 'वैराज्य' शब्द से प्रायः गणतन्त्र का निदेश होता था। विगतों राजा 'यस्मात्तद्वैराज्यम्' जिस शासन संस्था में राजा न रहता था वह वैराज्य कहा जाता था।

द्वैराज्य :

स्पार्ट की भाँति प्राचीन भारत में भी द्वैराज्य या दो राजाओं द्वारा शासित राज्य थे। सिकन्दर के समय में पाटल राज्य (आधुनिक सिंध) में पृथक देशो के दो राजाओं का संयुक्त शासन था। अर्थशास्त्र (8/2) में भी ऐसे राज्यों का उल्लेख मिलता है। ऐसे राज्यों का सूत्रपात शायद इस प्रकार हुंआ होगा जब दो भाईयों अथवा उत्तराधिकारी ने राज्य के विभाजन के बाजय संपूर्ण राज्य पर संयुक्त शासन करना ही पसन्द किया हो परन्तु जिस प्रकार एक म्यान में दो तलवार नहीं रह सकते खासकर जब उनके अधिकरों या कार्यों का विभाजन न हो और हर एक अपने को ही बड़ा माने। ऐसे राज्य तो प्रायः दलबन्दी और परस्पर संघर्ष के अखाड़े रहे होंगे इसी से अर्थशास्त्र इनके पक्ष में नही है और जैन साधुओं को ऐसे राज्य में रहने या जाने का निषेध किया गया है। अक्सर आपसी झगड़ा बचाने की नीयत से द्वैराज्य के शासक भाई या सम्बन्धी राज्य या बंटवारा कभी–कभी कर लेते थें, विदर्भ में शूंगों द्वारा स्थापित द्वैराज्य में ऐसा ही हुआ था। बंटवारे के बाद भी दोनो शासक महत्ववपूर्ण विषयों पर संयुक्त विचार–परामर्श किया करते होंगे। जब संयुक्त राज्य के दोनो शासकों में केल रहता था तब उसे द्वैराज्य या दो –राज्य (प्राकृत) कहते थे, जब उन राज्यों में झगड़ा रहता था तब उसे विरूद्ध– राज्य (प्राकृत) कहते थे।

वैदिक वांड्मय में कभी–कभी राजाओं की समिति का वर्णन मिलता है। यह भी कहा गया है कि वह व्यक्ति राजा

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

बन सकता है जिसके लिए अन्य राजाओं से सहमति दी हो। संभवतः इससे सामन्त अथवा गणराज्य का अभिप्राय हो जिसमें सारा अधिकार उच्चवर्ग या सरदारों की परिषद् के हाथ रहता है। उसके सब सभासद राजा कहे जाते थे और ये राज्य के सर्वोच्च अधिकारी को चुनते थे और वह भी राजा की ही उपाधि से सम्बोधित होते थे। देश के कुछ हिस्सों में इस प्रकार के राज्यों का ईसवी पूर्व छठी शताब्दी तक अस्तित्व था।

नृपतन्त्र :

नृपतन्त्र और उच्चवर्ग–तन्त्र के साथ–साथ विशुद्ध प्रजातंत्र का अस्तित्व भी भारत में वैदिक काल से ही है। ऐतरेय ब्राह्मण में एक स्थल पर कहा गया है कि हिमालय के पास उत्तर–कुरू और उत्तर–मद्र आदि जनों में विराट् (राजारहित) शासनतंत्र प्रचलित था जिस कारण वे लोग विराट् अर्थात् नृप–हीन जन कहे जाते थे। इसी प्रकरण में पौर्वात्यों, दक्षिणात्यों के राजाओं और उनकी उपाधियों (सम्राट् और भोज) का उल्लेख है और उपर्युक्त स्थल में विराट् शब्दा राजा के लिए नही किन्तु तटस्थ लोगों के लिए स्पष्ट रूप से प्रयुक्त हुआ है। अतः निःसंदिग्ध है कि उत्तर–कुरू और उत्तर–मद्र जनों में अराजतंत्र या प्रजातन्त्र शासन–पद्धति प्रचलित थी।

प्राचीन काल में हिन्दुस्तान में नगर–राज्य भी हुआ करते थे, जिनका आधिपत्य राजधानी व समीपवर्ती प्रदेश पर ही रहता था। अनेक ग्रीक ग्रंथकारों ने उनका निर्देश किया है। एरियन के कथनानुसार न्यासों में ऐसा एक नगर–राज्य था। सिकन्दर ने उस राज्य के 100 प्रतिष्ठित नागरिक जामिन के रूप में माँगे। उसके अध्यक्ष ने उससे कहा, ''यदि किसी नगर से एक सौ प्रतिष्ठित व कार्यक्षम नागरिक छीन ली जाये तो उसका शासन–यन्त्र निकम्मा हो जायेगा। इससे यह स्पष्ट होता है कि न्यास एक नगर राज्य था। शिबि के नागरिकों के द्वारा जब आत्मसमर्पण किया गया, तब सिकन्दर ने उनके नगर को स्वराज्य फिर प्रदान किया, ऐसा जो वर्णन डायोडोरस ने किया है उससे यह मालूम पड़ता है कि उनका भी नगर राज्य था। आद्रैस्टियों का पिंप्रम, कठो का संगल व सिंध स्थित पाताल भी नगर राज्य ही थें। सिन्धु तीर पर के बलवान गामों का निर्देश महाभारत में आता है। वे ग्राम भी प्रायः नगर–राज्य ही थे। त्रिपुरी, माध्यमिका, उज्जयनि, वाराणसी, कौशांबी इत्यादि नगरों की मुद्राएँ मिली हैं जिससे यह प्रतीत होता है कि इन नगरों में एक समय में नगर–राज्य ही थे। नगर राज्यों में ग्रीस के समान हिन्दुस्तान में भी निकटवर्ती ग्रामों का अन्तर्भाव होता था, किन्तु शासन–संचालन प्रायः नगरवासी लोग ही करते थे।

राज्य–संघ और सम्मिलित राज्य :

राज्य–संघ और सम्मिलित–राज्य भी प्राचीन भारत में अज्ञात न थे। उत्तर वैदिक काल में कुरू–पांचालों ने मिलकर एक शासक के अधीन अपना सम्मिलित–राज्य कायम किया था। पाणिनि के समय में क्षुद्रक और मालव राज्य अलग–अलग थे परन्तु महाभारत में (ई0 पू0 250) बहुधा इनका एक साथ उल्लेख मिलता है। सिकन्दर के आक्रमण का सामना करने के लिए इन्होंने दोनों राज्यों का एक संघ बनाया था, जो एक शताब्दी तक कायम रहा। इसे दृढ़ करने के लिए क्षुद्रक और मालवों में परस्पर 10 हजार विवाह हुए थे। यौधेय गणराज्य भी तीन उपराज्यों का संघ था। अक्सर ये संघ से अल्पकालीन ही हुआ करते थे। बुद्ध और महावीर के जीवन–काल में लिच्छिवियों ने एक बार मल्लों के साथ और थोड़े ही समय बाद दूसरी बार विदेह के साथ संघ बनाया था।

महाभारतकालीन मान्यताएँ :

महाभारत एवं रामायण महाकाव्यों ने हिन्दु सामाजिक जीवन के स्वधीकरण में महान योगदान किया हैं। उनमें वर्णित पात्रों द्वारा किये गये कर्म हमारे लिए आज भी आदर्श माने जाते हैं। ग्रीस एवं अन्य पश्चिमों देशों में होमरकृत इलियड और औहिसी भी अध्ययें ग्रंथ है परन्तु उनकी अपेक्षा भारतीय को रामायण एवं महाभारत में अधिक प्रभावित किया है। अभी भी महाभारत जीवन्त ग्रंथ है एवं उसकी महत्ता पांचवा वेद के रूप में की जाती है। इसमें सन्निहित सामाजिक सिद्धान्तों एवं संस्थाओं का अध्ययन महत्वपूर्ण है। क्योंकि इसमें दीर्घकाल विधि के सामाजिक विचारों , व्यवहारों और सिद्धान्तों का उल्लेख है।

प्राचीन विचारधाराएं, सामाजिक संगठन एवं आर्थिक विकास विभिन्न कारणों से परिवर्तित होते रहते हैं, परन्तु उसमें पारस्परिक प्रभाव उत्पन्न करने वाले तत्व भी होते हैं। समाज की आर्थिक व्यवस्था भी देश के इतिहास को प्रभावित करती है। इसमें किसी व्यक्ति विशेष का योगदान उतना महत्वपूर्ण नहीं होता है। यह सत्य है कि व्यक्ति भी अपनी विचारधाराओं से दुबारा अपने युग को प्रभावित करता है, परन्तु यह इस बात पर निर्भर है कि वह युग की आवश्यकताओं और जनभावना को कहां तक समझता है। इतिहास किसी महान व्यक्ति के जीवन की घटनाओं का संग्रह–मात्र नहीं है, बल्कि सामान्य जनता की क्रियात्मक शक्तियों का नाम है, जिनके द्वारा उनके आर्थिक, सामाजिक एवं धार्मिक जीवन का नियमन होता है।

भौगोलिक तत्व भी सामाजिक विचारधाराओं एवं संगठनों को प्रभावित करने में मुख्य रूप से योगदान करते हैं एक भौगोलिक क्षेत्र में कई वर्ग रहते हैं जो अपनी सामाजिक मान्यताओं का पालन करते हैं। उस क्षेत्र मे कई वर्ग रहते हैं जिनके सामाजिक जीवन केवल एक जाति विशेष तक ही सीमित नहीं रहता है, बल्कि विभिन्न विचारधाराओं का उसमें समन्वय भी होता है।

महाभारत का मुख्य क्षेत्र कौन सा है यह एक विचारणीय प्रश्न है? महाभारत का युद्ध कुरूक्षेत्र में लड़ा गया, जो वर्तमान हरियाणा में है, परन्तु कौरव एवं पांडवों का मुख्य कर्म–क्षेत्र हस्तिनापुर एवं उसके समीपवर्ती क्षेत्रों में था, जो उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले में है। महाभारत का प्रथम वनवास

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

तक्षशिला में हुआ था एवं तदुपरान्त नैमिषारण्य में। इस प्रकार यह विदित होता है कि महाभारत युद्ध एवं महाभारत ग्रंथ का मुख्य क्षेत्र गंगा, यमुना एवं सरस्वती की घाटियों तक सीमित था। मुख्य रूप से इसी क्षेत्र का वर्णन हमें महाभारत में अधिक मिलता है। जिन सामाजिक संस्थाओं एवं विचारधाराओं का उल्लेख हमें महाभारत में मिलता है वे मुख्य रूप से इसी क्षेत्र की है। यद्यपि महाभारत का मुख्य क्षेत्र गंगा, यमुना एवं सरस्वती की घाटियों तक सीमित हैं परन्तु इसका बाह्य क्षेत्र बहुत ही विस्तृत है। इसके भौगोलिक अध्ययन से विदित होता है कि यह मध्य एशिया के भूगोल से भी परिचित है एवं वहॉ की विभिन्न जातियों एवं उनके सामाजिक संगठनों से भी परिचित है। पश्चिम में गंधार यानि वर्तमान पूर्वी अफगानिस्तान एवं पाकिस्तान के पश्चिमी भागों से भी महाभारतकारों का परिचय है। सिन्ध भी महाभारत के बाह्य क्षेत्र में था क्योंकि वहां का राजा जयद्रथ कौरवों का बहनोई था एवं महाभारत युद्ध में उसकी भी भूमिका थी। सौराष्ट्र का संबंध महाभारत के पात्रों –विशेषकर कृष्ण से मुख्य रूप से था; क्योंकि द्वारका में उनकी राजधानी थी एवं अपने जीवन का उत्तरवर्ती भाग उन्होंने वहीं बिताया था। विदर्भ की राजकुमारी कुंती पांडवों की माता थी, जो वर्तमान महाराष्ट्र में है। उत्तर हिमालय की घाटियों से भी महाभारत के क्षेत्र का संबंध है; क्योंकि उसमें इस क्षेत्र के कई राज्यों तथा विभिन्न जातियों के उल्लेख हें। पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार से भी पांडवों के संबंध थे, यथा उन लोगों ने राजगृह के जरासंघ को पराजित किया था एवं अंगराज कर्ण पांडवों के ही भाई थे। इसी प्रकार महाभारत युद्ध में जिन लोगों ने भाग लिया, उनमें भारत की विभिन्न जातियों एवं राजाओं के उल्लेख हैं और वे समग्र भारत की विस्तृत सीमा में रहते थे।

निष्कर्ष :

प्राचीन भारत की संस्थाओं से संबंधित मान्यताओं के विवेचनोपरान्त यह स्पष्ट है कि तत्कालीन भारत की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था के प्रमुख आधार के रूप में इन मान्यताओं को स्वीकार किये गए। अध्ययन से संबंधित तथ्य भारत की अति प्राचीन और ऐतिहासिक मान्यताओं को उद्घाटित करने में समर्थ है। प्राचीन इतिहास के साधन के रूप में उपरोक्त विश्लेषण उपयोगी हैं।

शोध–संदर्भ :

1. महाभारत में सामाजिक सिद्धांत एवं संस्थायें–राधेश्याम शर्मा।
2. स्मृति चन्द्रिका–भाग–प्रथम।
3. कल्याण विशेषांक–गीता प्रेस, गोरखपुर, 1998।
4. बुद्धिस्ट रिर्कोड्र्स ऑफ द वेस्टर्न वर्ल्ड चाइनिज इवेनसांग से अनुवादित।
5. पाणिनि सूत्र – 6,3,18।
6. अनुशासन पर्व–राधेश्याम शर्मा।
7. भारतीय संस्कृति–प्रीतिप्रभा गोयल।
8. धर्मशास्त्र का इतिहास– पी0वी0 काणे।
9. सम आस्पेस्ट्स ऑफ द उपनिषदक–बी0 पी0 राय।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved